गिधौरिया गज़ल

ज्योतीन्द्र मिश्र

मातृ चरणाभ्यां वन्दे

प्रसंग वश

हिन्दी साहित्य की समृद्धि में, इसकी विभिन्न विधाओं के विकास में लोकभाषा एवं जनबोलियों का महार्ध्य अवदान है। ऐसी लोकभाषा एवं जनबोलियों का समावेश हिन्दी साहित्य के सृजन में बखूबी किया गया। आंचलिकता ने हिन्दी को और भी निखारा है। महाकवि नागार्जुन, फणीश्वर नाथ रेणु जैसे बिहारी साहित्यकारों ने आंचलिकता को हिन्दी साहित्य में प्रतिष्ठित किया, गौरवान्वित किया है। हिन्दी साहित्य में इनकी कालजयी रचनाओं को वैश्विक पहचान मिली है।

हिन्दी साहित्य की अपनी अनेकों विधाएं हैं किन्तु उर्दू साहित्य की मशहूर विधा गजल भी अब हिन्दी साहित्य में घुल मिल गई है। यह हिन्दी और उर्दू के आपसी मेल–जोल का प्रभाव है। हिन्दी साहित्य की एक सशक्त विधा के रूप में गजल की विधा को भी साहित्य सेवियों ने सहर्ष स्वीकृति दी है। कहना होगा कि दुष्यंत कुमार ने हिन्दी गजलों को कंठ कंठ में बसा

दिया। हिन्दी साहित्य की इसी विधा में आंचलिकता का समावेश करते हुए प्रस्तुत पुस्तक **"धोरैया"** में गिधौरिया गजल लिखी गई है। गिधौरिया बोली का भी अपना इतिहास है। वस्तुतः बिहार राज्य के जमुई जिला के अधीन झारखंड राज्य की सीमा से सटे, गिधौर एक ऐतिहासिक नगरी है। प्राचीन युग में यह अंग देश के अन्तर्गत था। अंगवासियों की बोली अंगिका कही जाती है। तेरहवीं सदी में चन्देल शासकों ने इस भूभाग में अपना राज्य स्थापित किया। तब यह गृधकूट नाम से विख्यात था जिसे अब गिधौर कहते हैं। वस्तुतः इस राज्य का नाम गृध्रकूट पर्वत से संबंधित है। इसी पर्वत के अंचल में इस राज्य का विकास हुआ। यही कारण है कि यहां की स्थानीय बोली में पर्वतीय बोली घुल मिल गयी है। चन्देल शासको ने अपनी पैतृक भूमि महोबा से पूरब की ओर राज्य की स्थापना की। चन्देलों की, सार्वभौम राजनीतिक कल्पना, वीरता, शासन का संगठन, साहित्य और कला के क्षेत्र में उनके अवदान ने मध्य युग को गौरवान्वित किया है। ललित कलाओं के क्षेत्र में भी चन्देलों ने अपनी सुखद स्मृति छोड़ी है। अभिनय, रंगशाला, संगीत, नृत्य की

संतोषजनक उन्नति हुई थी। वे अपनी बोली भी लाये थे जिसे अंगिका ने अपने अन्दर मिला लिया। मध्य युग में यह भूभाग बनों से व्याप्त था। चन्देलों के आगमन के पूर्व भी यह भूभाग बंगाल आदि प्राच्य देशों के मार्ग में पड़ने के कारण, देश के प्रत्येक राजनीतिक परिवर्तन, सांस्कृतिक परिवर्तन का साक्षी रहा। यहां की स्थानीय बोली में बंगला का प्रभाव भी स्पष्ट है। गिधौर के प्रथम चंदेल शासक वीर विक्रम थे। उनके विश्वस्त राज्यमंत्री मग ब्राह्मण पं० गिरीश्वर शुक्ल थे जो कवि भी थे। उन्होने गिधौरिया बोली में छिटपुट रचनाएं की थी। वीर विक्रम कलाकारों, कवियों और विद्वानों के आश्रयदाता के रूप में विख्यात थे। इसी वंश की अगली पीढ़ी में पूरण सिंह राजा हुए। वे भी संस्कृत और नागरी के विद्वान थे कला प्रेमी थे। इनके राजत्व काल में भी साहित्य सृजन हुआ। इसी चंदेल वंश के राजा गोपाल सिंह ने अंग्रेजी शासन काल में व्यापार और आर्थिक उन्नयन के लिए जमुई नामक नगर बसाया जो आज जिला बन गया है। यह स्वीकारना होगा कि यदि चंदेल शासक इस मनहूस उपत्यका में अपना राज्य स्थापित नहीं करते तो आज आधुनिक जमुई जिला में

राजनैतिक, सांस्कृतिक, विकास नहीं होता। गोपाल सिंह के कारण ही गिधौर राज्य के इतिहास का नया अध्याय आरम्भ हुआ। सन् 1886 में गिधौर राज्य की बागडोर साहित्य और कला के उदार प्रेमी, विद्वानों के आश्रयदाता रावणेश्वर प्रसाद सिंह के हाथों में आया। वे स्वयं भी प्रतिभा सम्पन्न कवि थे तथा संस्कृत, फारसी, अंग्रेजी के जानकार थे। इनके पुत्र चन्द्रमॉलेश्वर प्रसाद सिंह भी अनेक भाषाओं के मर्मज्ञ थे। संस्कृत की ओर उनका प्रबल आकर्षण था। संगीत और कला के प्रति उनकी निष्ठा भी सराहनीय थी। कहना होगा कि चंदेल शासकों ने लगभग 600 वर्षों के शासन काल में भारतीय संस्कृति, साहित्य, कला की केवल रक्षा ही नहीं की, बल्कि इसे जीवन्त रखने में कई पीढ़ियों ने सहयोग किया।

बताते चलें कि गिधौर का भौगोलिक स्वरूप छोटी–छोटी पहाड़ियों, जंगलों, बरसाती नदियों से घिरा है। झारखंड राज्य के बनने के बावजूद जमुई जिले में आज भी आदिवासियों, संतालों का बाहुल्य है। संताली भाषा का प्रभाव भी स्थानीय बोली में है। इसके अलावे गिधौरिया बोली में मैथिली का मगही प्रभावित

रूप अंगिका, छोटानागपुर में बोली जाने वाली नागपुरिया बांग्ला और मगही का प्रभाव स्पष्ट है। इस प्रकार भोजपुरी की नागपुरिया अक्खड़ता, मैथिली की मधुरता, मगही की एकरूपता और बांग्ला की मोहकता स्थानीय बोली में झलकती है। पहाड़ी बोलियों में भी भोजपुरी समाइ हुई है। यही कारण है कि सर जार्ज ग्रियर्सन ने बोलियों के सर्वेक्षण (1894–1923) के दौरान पहाड़ी बोलियों को भी एक उपवर्ग में रखा। सर ग्रियर्सन का कहना है कि बिहारी बोलियों का उदभव उसी भाग के अपभ्रंश से हुआ है, जिससे बांग्ला, उड़िया आदि का। यहां के लोग जब एक दूसरे से मिलते हैं तो पूछते हैं 'की खबर'। यह बांग्ला का 'की खोबर' है। ग्रियर्सन ने बिहारी बोलियों और हिन्दी में भिन्नता की भी चर्चा की है। बिहारी बोलियों में संज्ञा के चार प्रचलित रूपों यथा घोड़ा, घोड़वा, घोड़े, घोड़उवा को अनावश्यक तथा उच्चारण सम्बन्धी भिन्नता को स्पष्ट किया है। जैसे हल को हर तथा गाली को गारी।

चन्देल शासकों ने भी स्थानीय बोली को शिष्ट बनाने में योगदान दिया। आदर सूचक संबोधन के लिए 'अपने आबही' 'अपने जाही' जैसे शब्द समाहित किये। वैसे

'अहो महरय' 'दुर मरदे' जैसे स्थानीय शब्द भी मौजूद हैं। कहीं कहीं 'अजी की करय है' जैसे आदर सूचक वाक्यांश भी प्रयोग में है। गिधौर राज्य के सम्पूर्ण क्षेत्र में यही बोली, बोली जाती है जिसे गिधौरिया बोली कहते हैं। चुंकि हर आठ कोस पर पानी और वाणी बदल जाती है इसलिए कहीं छलै कही हलै का भी प्रयोग होता है।

गिधौरिया बोली का साहित्य, यद्यपि समृद्ध नहीं है किन्तु अखिल भारतीय स्तर के साहित्य सेवी हास्य रसावतार पं० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी जी, जो जमुई जिला के अन्तर्गत मलयपुर गाँव के निवासी थे, उन्हें मैं गिधौरिया बोली का आदि कवि मानता हूँ। उन्होने गिधौरिया बोली में स्फुट रचनाएं की हैं एक बानगी देखिये

गाय चरैलें, दूध दुहैंलें
चुकड़ी के लटकैलें
जगन्नाथ घर ऐलखीं कान्हा
रसे रसें मुसकैलें ।

इस छोटी सी रचना में चुकड़ी, ऐलरवीं, रसे रसे, ठेठ गिधौरिया बोली है। काव्य मर्मज्ञ इस सरल रचना का व्यापक भाव समझ गये होंगे। उपर्युक्त पंक्तियों का रचनाकाल ज्ञात नहीं है। यह कविता 'जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी स्मृति ग्रन्थ' से उद्धृत है।

इसके अलावे गिधौरिया बोली के लोक कवि हुए हैं स्व० अर्जुन दास (1876–1966)। ये क्षत्रिय थे किन्तु भक्तिमार्ग में आने के कारण अपना नाम अर्जुन दास रखा। इनका कीर्तन मुझे अपने गाँव मांगोबन्दर में सुनने का मौका बचपन में मिला था। ये आशु कवि की भांति गिधौरिया बोली में कीर्तन रचते और गाते चले जाते। इनके पास कोई कापी या डायरी नहीं होती थी। इनकी अपनी कीर्तन मंडली थी। क्षत्रिय होते हुए भी इनका आहार, व्यवहार ब्राह्मणों जैसा था। ये लोक कवि तो थे ही, लोकश्रद्धा के पात्र भी थे। 1962 में चीन युद्ध के समय कीर्तन के क्रम में देशभक्ति रचना भी पूरे ओज और अभिनय के साथ सुनाई थी। इनका जन्म जमुई जिलान्तर्गत, गिधौर के समीप केशोपुर गाँव में हुआ था। उनके कीर्तन एवं पद आज भी लोककंठ में जीवित है। डॉ० रवीश कुमार सिंह, प्राध्यापक, लोहन्डा कॉलेज संकलित करने में लगे हैं। जिसे 'अर्जुन दास पदावली' नाम दिया गया है। उनके पदों की एक बानगी प्रस्तुत है:–

यशोदा अपन लला के समझैभो की नाहिं। टेक
गोप समूह संग ले जाके ब्रज घर घर में धूम मचाके

यह कुचाल तजि भली चाल सिखलैभो की नाहिं (1)
माखन घर जा पावत नाहि भागत कहे आग लग जाहिं
अर्जुन अधम जानि चरणन के दरसैभो की नाहि (4)

स्थानीय गिधौरिया बोली का 'समझइभो या समझैभो, सिखलैभो, दरसैभो प्रचलित शब्द है। अर्जुन दास की रचना उनके पास संकलित नहीं रहती थी। कीर्तन मंडली के सदस्य उसे लिखकर रखते थे। तथापि कुछ रचनाएं संकलित हुई हैं। किसी भी रचनाकार की रचना लोक कंठ में जीवित हो, यह कवि को परम सुख देता है। गिधौरिया बोली के तीसरे लोक कवि हैं, श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिंह। प्रारंभिक साहित्य सृजन के क्रम में इनका नाम सुरेन्द्र मुकुल था। कालान्तर में भक्ति मार्ग पकड़ लिया। अब श्री सुरेन्द्र दास कहलाते हैं। श्री दास, अपनी ही लिखी एक रचना 'सिम्मर फुललै लाल गे मइया, देखै में लागै कमाल गे मइया' के नाम से पहचाने जाते हैं। जमुई जिला के अन्तर्गत कवाल फरियत्ता गाँव के निवासी हैं। ये शिक्षित किसान हैं तथा 'तूफान' और 'गुड़गुड़ी' नाम की दो कविता संग्रह प्रकाशित की है।

मैंने भी इस जन बोली की समृद्धि के लिए, गजलों की आधुनिक विधा में ही 'गिधौरिया गजल' नाम देते हुए गिधौरिया बोली में

गजल लिखे हैं। गजलों की विशेषता होती है कि ये आसानी से गाये जा सकते हैं तथा बहुत लम्बा नहीं होता। सुनने का धैर्य श्रोताओं में बचा रहता है। यदि ये गजल कर्णप्रिय हो तो श्रोता सुनते भी हैं। ताली भी पीटते हैं और कंठगत भी कर लेते हैं। गिधौरिया बोली में अब तक कीर्तन, पद, कविता ही लिखी गई किन्तु गजल नहीं लिखे गये। पहली गिधौरिया गजल, चन्द्रचूड़ विद्यालय, गिधौर की स्मारिका में छपी जो स्व० दिग्विजय सिंह विशेषांक के रूप में था।

बहरहाल, मेरा उद्देश्य अपनी बोली को जन–जन के कंठो में जीवित रखना है। आधुनिकता की दौड़ में अपने घर, आंगन की बोली का अस्तित्व बचा रहे। यह बोली हमें आत्मीयता प्रदान करती है। यह लोकभाषा लोक संस्कृति की अभिरक्षा का प्रश्न है। इस बोली को भी पहचान मिलनी चाहिए।

पाठकों के प्रतिक्रिया की अपेक्षा रहेगी।

सादर,

ज्योतीन्द्र मिश्र

जीवन वृत

नाम	–	ज्योतीन्द्र मिश्र
पिता का नाम	–	श्री उपेन्द्र नाथ मिश्र
स्थायी पता	–	मु०पो० मांगोबन्दर वाया पोस्ट– गिधौर जिला– जमुई (बिहार)
जन्म तिथि	–	18.12.1947
शिक्षा	–	बी.एस.सी. (लंगट सिंह कॉलेज, मुजफ्फरपुर)
भाषा ज्ञान	–	संस्कृत, हिन्दी, मैथिली, भोजपुरी, अंग्रेजी, जर्मन
पुरस्कार	–	तुलसी जयन्ती कविता लेखन प्रतियोगिता (1963) में स्व० गोपाल सिंह नेपाली द्वारा हायर सेकेन्ड्री स्कूल, जमुई में दिया गया प्रथम पुरस्कार
प्रकाशित रचनाएं	–	आर्यावर्त, आज, अरुणाभ, ऐसा, अन्तराल–2, अग्रसर, कोशा, कमेरा, कालान्तर, कविता श्री, कादम्विनी, जनशक्ति, ज्योत्सना, समरक्षेत्र, संघर्षदूत, श्रमिक भावना, भारतमेल, बिहारडाक बन्धु, पहली तारीख, युवक, ललित

बिहार, लेकिन राष्ट्रचेतना, आहवान (वी.ई.पी.)

प्रतिनिधित्व	–	प्रगतिशील लेखक सम्मेलन, अफ्रो–एशियाई लेखक सम्मेलन, नई दिल्ली (1970)
संपादन	–	बिहार डाक (साप्ताहिक मुजफ्फरपुर) आहवान (बिहार शिक्षा परियोजना) अरुणाभ (मासिक, जमुई) ऐसा (मासिक, झाझा) झाझा जगजार (मासिक, झाझा) स्मारिका (भू०पू० विधान सभाध्यक्ष स्व० त्रिपुरारि प्रसाद सिंह)
सदस्य	–	प्रगतिशील लेखक संघ, बिहार राजेन्द्र साहित्य परिषद्, पटना विजय खरे एक्टर्स अकादमी, मुजफ्फरपुर
प्रकाशित पुस्तक	–	वह (शब्द चित्र) नीले शैवाल (गीत नवगीत) जुदा होने से पहले (गजल संकलन)
फिल्म गीत	–	हम हई गंवार (भोजपुरी)

		गायक– पद्यम श्री उदित नारायण
टेली फिल्म	–	अंजोरिया कहिया होई (भोजपुरी) गायिका– प्रियंका गहरवार
ऑडियो / वीडियो सी०डी० टी सीरीज	–	सकल जगतारिणी हे छठि मइया (भोजपुरी) सुपवा ले लेहु बबुआ (छठ गीत) अरग (छठ गीत) अनमोल दुलहा (विवाह गीत) सगुन (विवाह गीत) गायिका– पद्यम श्री शारदा सिन्हा
वीडियो सी०डी०	–	जागी जागी दादा जी (भोजपुरी) गायक– विवेक भारद्वाज
गजल कैसेट	–	कश्ती के मुसाफिर (हिन्दी) गायक– मनोज मिश्र / प्रियंका गहरवार ओए रब्बा दिल धड़के (हिन्दी) गायिका– विभा रमण
सम्प्रति	–	स्वतंत्र लेखन
सचलभाष	–	9835130185